1 OM

SAI * SRI SAI *

* JAI JAI SAI

2. S
R
I
SAT CHITANAND
S
A
T
G
U
R
U

SAINATH MAHARAJ KI JAI

अध्याय - ३६

आश्चर्यजनक कथायें

(१) गोवा के दो सज्जन और (२) श्रीमती औरंगाबादकर।

इस अध्याय में गोवा के दो महानुभावों और श्रीमती औरंगाबादकर की अद्‌भुत कथाओं का वर्णन है।

गोवा के दो महानुभाव

एक समय गोवा से दो महानुभाव श्रीसाईबाबा के दर्शनार्थ शिरडी आये। उन्होंने आकर उन्हें नमस्कार किया। यद्यपि वे दोनों एक साथ ही आये थे, फिर भी बाबा ने केवल एक ही व्यक्ति से पन्द्रह रुपये दक्षिणा माँगी, जो उन्हें आदरसहित दे दी गई। दूसरा व्यक्ति भी उन्हें सहर्ष ३५ रुपये दक्षिणा देने लगा तो उन्होंने उसकी दक्षिणा लेना अस्वीकार कर दिया। लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ। उस समय शामा भी वहाँ उपस्थित थे। उन्होंने कहा कि "देवा! यह क्या, ये दोनों एक साथ ही तो आये हैं। इनमें से एक की दक्षिणा तो आप स्वीकार करते हैं और दूसरा जो अपनी इच्छा से भेंट दे रहा है, उसे अस्वीकृत कर रहे हैं? यह भेद क्यों?" तब बाबा ने उत्तर दिया कि "शामा! तुम नादान हो। मैं किसी से कभी कुछ नहीं लेता। यह तो मसजिद माई ही अपना ऋण माँगती है और इसलिये देने वाला अपना ऋण चुकता कर मुक्त हो जाता है। क्या मेरे कोई घर, सम्पत्ति या बाल-बच्चे हैं, जिनके लिये मुझे चिन्ता हो? मुझे तो किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। मैं तो सदा स्वतंत्र हूँ। ऋण, शत्रुता तथा हत्या इन सबका प्रायश्चित अवश्य करना पड़ता है और इनसे किसी प्रकार भी छुटकारा संभव नहीं है।' तब बाबा अपने विशेष ढंग से इस प्रकार कहने लगे:-

"अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में ये महाशय निर्धन थे। इन्होंने ईश्वर से प्रतिज्ञा की थी कि यदि मुझे नौकरी मिल गई तो मैं एक माह का वेतन तुम्हें अर्पण करूँगा। इन्हें १५

रुपये माहवार की एक नौकरी मिल गई। फिर उत्तरोत्तर उन्नति होते होते ३०, ६०, १००, २०० और अन्त में ७०० रुपये तक मासिक वेतन हो गया। परन्तु समृद्धि पाकर ये अपना वचन भूल गये और उसे पूरा न कर सके। अब अपने शुभ कर्मों के ही प्रभाव से इन्हें यहाँ तक पहुँचने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। अतः मैंने इनसे केवल पन्द्रह रुपये ही दक्षिणा माँगी, जो इनके पहले माह की पगार थी।"

दूसरी कथा

"समुद्र के किनारे घूमते-घूमते मैं एक भव्य महल के पास पहुँचा और उसकी दालान में विश्राम करने लगा। उस महल के ब्राह्मण स्वामी ने मेरा यथोचित स्वागत कर मुझे बढ़िया स्वादिष्ट पदार्थ खाने को दिये। भोजन के उपरान्त उसने मुझे आलमारी के समीप एक स्वच्छ स्थान शयन के लिये बतला दिया और मैं वहीं सो गया। जब मैं प्रगाढ़ निद्रा में था तो उस व्यक्ति ने पत्थर खिसकाकर दीवाल में सेंध डाली और उसके द्वारा भीतर घुसकर उसने मेरा खीसा कतर लिया। निद्रा से उठने पर मैंने देखा कि मेरे तीस हजार रुपये चुरा लिये गये हैं। मैं बड़ी विपत्ति में पड़ गया और दुःखित होकर रोता बैठ गया। केवल नोट ही नोट चुरा लिये थे, इसलिये मैंने सोचा कि यह कार्य उस ब्राह्मण के अतिरिक्त और किसी का नहीं है। मुझे खाना-पीना कुछ भी अच्छा न लगा और मैं एक पखवाड़े तक दालान में ही बैठे बैठे चोरी का दुःख मनाता रहा। इस प्रकार पन्द्रह दिन व्यतीत होने पर रास्ते से जाने वाले एक फकीर ने मुझे दुःख से बिलखते देखकर मेरे रोने का कारण पूछा। तब मैंने सब हाल उससे कह सुनाया। उसने मुझसे कहा कि यदि तुम मेरे आदेशानुसार आचरण करोगे तो तुम्हारा चुराया धन वापस मिल जायेगा। मैं एक फकीर का पता तुम्हें बताये देता हूँ। तुम उसकी शरण में जाओ और उसकी कृपा से तुम्हें तुम्हारा धन पुनः मिल जायेगा। परन्तु जब तक तुम्हें अपना धन वापस नहीं मिलता, उस समय तक तुम अपना प्रिय भोजन त्याग दो। मैंने उस फकीर का कहना मान लिया और मेरा चुराया धन मिल गया। तब मैं समुद्र तट पर आया, जहाँ एक जहाज खड़ा था, जो यात्रियों से ठसाठस भर चुका था। भाग्यवश वहाँ एक उदार प्रकृतिवाले चपरासी की सहायता से मुझे एक स्थान मिल गया। इस प्रकार मैं दूसरे किनारे पर पहुँचा और वहाँ से मैं रेलगाड़ी में बैठकर मसजिद माई आ पहुँचा।"

कथा समाप्त होते ही बाबा ने शामा से इन अतिथियों को अपने साथ ले जाने और भोजन का प्रबन्ध करने को कहा। तब शामा उन्हें अपने घर लिवा ले गया और उन्हें भोजन कराया। भोजन करते समय शामा ने उनसे कहा कि "बाबा की कहानी बड़ी ही

रहस्यपूर्ण है, क्योंकि न तो वे कभी समुद्र की ओर गये हैं और न उनके पास तीस हजार रुपये ही थे। उन्होंने न कहीं भी यात्रा ही की, न उनकी कोई रकम ही चुरायी गई और न वापस आई।" फिर शामा ने उन लोगों से पूछा कि "आप लोगों को कुछ समझ में आया कि इसका अर्थ क्या था?" दोनों अतिथियों की घिग्घियाँ बँध गईं और उनकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। उन्होंने रोते-रोते कहा कि "बाबा तो सर्वव्यापी, अनन्त और परब्रह्म स्वरूप हैं। जो कथा उन्होंने कही है, वह बिलकुल हमारी ही कहानी है और वह मेरे ऊपर बीत चुकी है। यह महान् आश्चर्य है कि उन्हें यह सब कैसे ज्ञात हो गया? भोजन के उपरान्त हम इसका पूर्ण विवरण आपको सुनायेंगे।"

भोजन के पश्चात् पान खाते हुये उन्होंने अपनी कथा सुनाना प्रारम्भ कर दिया। उनमें से एक कहने लगाः-

"घाट में एक पहाड़ी स्थान पर हमारा निवास-स्थान है। मैं अपने जीवन-निर्वाह के लिये नौकरी ढूँढ़ने गोवा आया था। तब मैंने भगवान् दत्तात्रेय को वचन दिया था कि यदि मुझे नौकरी मिल गई तो मैं तुम्हें एक माह की पगार भेंट चढ़ाऊँगा। उनकी कृपा से मुझे पन्द्रह रुपये मासिक की नौकरी मिल गई और जैसा कि बाबा ने कहा, उसी प्रकार मेरी उन्नति हुई। मैं अपना वचन बिलकुल भूल गया था। बाबा ने उसकी स्मृति दिलाई और मुझसे पन्द्रह रुपये वसूल कर लिये। आप लोग इसे दक्षिणा न समझें। यह तो एक पुराने ऋण का भुगतान है तथा दीर्घ काल से भूली हुई प्रतिज्ञा आज पूर्ण हुई है।

शिक्षा

यथार्थ में बाबा ने कभी किसी से पैसा नहीं माँगा और न ही अपने भक्तों को ही माँगने दिया। वे आध्यात्मिक उन्नति में कांचन को बाधक समझते थे और भक्तों को उसके पाश से सदैव बचाते रहते थे। भगत म्हालसापति इसके उदाहरणस्वरूप हैं। वे बहुत निर्धन थे और बड़ी कठिनाई से ही अपना जीवन बिताते थे। बाबा उन्हें कभी पैसा माँगने नहीं देते थे और न ही वे अपने पास की दक्षिणा में से उन्हें कुछ देते थे। एक बार एक दयालु और सहृदय व्यापारी हंसराज ने बाबा की उपस्थिति में ही एक बड़ी रकम म्हालसापति को दी, परन्तु बाबा ने उनसे उसे अस्वीकार करने को कह दिया।

अब दूसरा अतिथि अपनी कहानी सुनाने लगा। "मेरे पास एक ब्राह्मण रसोइया था, जो गत ३५ वर्षों से ईमानदारी से मेरे पास काम करता आया था। बुरी लतों में पड़कर उसका मन पलट गया और उसने मेरे सब रुपये चोरी कर लिये। मेरी आलमारी दीवाल में लगी थी और जिस समय हम लोग गहरी नींद में थे, उसने पीछे से पत्थर

हटा कर मेरे सब तीस हजार रुपयों के नोट चुरा लिये। मैं नहीं जानता कि बाबा को यह ठीक-ठीक धन-राशि कैसे ज्ञात हो गई? मैं दिन-रात रोता और दुःखी रहता था। एक दिन जब मैं इसी प्रकार निराश और उदास होकर बरामदे में बैठा था, उसी समय रास्ते से जाने वाले एक फकीर ने मेरी स्थिति जानकर मुझसे इसका कारण पूछा। मैंने उसे सब हाल कह सुनाया। तब उसने बताया कि कोपरगाँव तालुके के शिरडी ग्राम में श्री साईबाबा नाम के एक औलिया रहते हैं। उन्हें वचन दो तथा अपना रुचिकर भोज्य पदार्थ त्याग, मन में कहो कि जब तक मैं तुम्हारा दर्शन न कर लूँगा, उस पदार्थ को कदापि न खाऊँगा। तब मैंने चावल खाना छोड़ दिया और बाबा को वचन दिया, "बाबा! जब तक मुझे तुम्हारे दर्शन नहीं होते तथा मेरी चुराई गई धन राशि नहीं मिलती, तब तक मैं चावल ग्रहण न करूँगा।" इस प्रकार जब पन्द्रह दिन बीत गये, तब वह ब्राह्मण स्वयं ही आया और सब धनराशि लौटाकर क्षमायाचनापूर्वक कहने लगा कि मेरी मति ही भ्रष्ट हो गयी थी, जो मुझसे आपका ऐसा अपराध बन गया है। मैं आपके पैर पड़ता हूँ। मुझे क्षमा करें। इसप्रकार सब ठीक-ठाक हो गया। जिस फकीर से मेरी भेंट हुई थी तथा जिसने मुझे सहायता पहुँचाई थी, वह फकीर फिर मेरे देखने में कभी नहीं आया। मेरे मन में श्री साईबाबा के दर्शन की, जिनके लिये फकीर ने मुझसे कहा था, बड़ी तीव्र उत्कंठा हुई। मैंने सोचा कि जो फकीर मेरे घर पर आया था, वह साईबाबा के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं हो सकता। जिन्होंने मुझे कृपाकर दर्शन दिये और मेरी इस प्रकार सहायता की, उन्हें ३५ रुपये का लालच कैसे हो सकता है? इसके विपरीत वे अहेतुक ही आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर ले जाने का पूरा प्रयत्न करते हैं।"

"जब चोरी गई राशि मुझे पुनः प्राप्त हो गई, तब मेरे हर्ष का पारावार न रहा। मेरी बुद्धि भ्रमित हो गई और मैं अपना वचन भूल गया। कुलाबा में एक रात्रि को मैंने साईबाबा को स्वप्न में देखा। तभी मुझे अपनी शिरडी यात्रा के वचन की स्मृति हो आई। मैं गोवा पहुँचा और वहाँ से एक स्टीमर द्वारा बम्बई पहुँच कर शिरडी जाना चाहता था। परन्तु जब मैं किनारे पर पहुँचा तो देखा कि स्टीमर खचाखच भर चुका है और उसमें बिलकुल भी जगह नहीं है। कैप्टन ने तो मुझे चढ़ने न दिया, परन्तु एक अपरिचित चपरासी के कहने पर मुझे स्टीमर में बैठने की अनुमति मिल गई और मैं इस प्रकार बम्बई पहुँचा। फिर रेलगाड़ी में बैठकर यहाँ पहुँच गया। बाबा के सर्वव्यापी और सर्वज्ञ होने में मुझे कोई शंका नहीं है। देखो तो, हम कौन हैं और कहाँ हमारा घर? हमारे भाग्य कितने अच्छे हैं कि बाबा हमारी चुराई गई राशि वापस दिलाकर हमें यहाँ खींच कर लाये। **आप शिरडीवासी हम लोगों की अपेक्षा सहस्त्रगुने श्रेष्ठ और भाग्यशाली**

हैं, जो बाबा के साथ हँसते-खेलते, मधुर भाषण करते और कई वर्षों से उनके समीप रहते हो। यह आप लोगों के गत जन्मों के शुभ संस्कारों का ही प्रभाव है, जो कि बाबा को यहाँ खींच लाया है। श्री साई ही हमारे लिये दत्त हैं। उन्होंने ही हमसे प्रतिज्ञा कराई तथा जहाज में स्थान दिलाया और हमें यहाँ लाकर अपनी सर्वव्यापकता और सर्वज्ञता का अनुभव कराया।"

श्रीमती औरंगाबादकर

सोलापुर के सखाराम औरंगाबादकर की पत्नी २७ वर्ष की दीर्घ अवधि के पश्चात् भी निःसन्तान ही थीं। उन्होंने सन्तानप्राप्ति के निमित्त देवी और देवताओं की बहुत मानतायें कीं, परन्तु फिर भी उनकी मनोकामना सिद्ध न हुई। तब वे सर्वथा निराश होकर अन्तिम प्रयत्न करने के विचार से अपने सौतेले पुत्र श्री विश्वनाथ को साथ ले शिरडी आईं और वहाँ बाबा की सेवा कर, दो माह रुकीं। जब भी वे मसजिद को जातीं तो बाबा को भक्त-गण से घिरे हुये पातीं। उनकी इच्छा बाबा से एकान्त में भेंट कर सन्तानप्राप्ति के लिये प्रार्थना करने की थी, परन्तु कोई योग्य अवसर उनके हाथ न लग सका। अन्त में उन्होंने शामा से कहा कि "जब बाबा एकान्त में हों तो मेरे लिये प्रार्थना कर देना।" शामा ने कहा कि "बाबा का तो खुला दरबार है। फिर भी यदि तुम्हारी ऐसी ही इच्छा है तो मैं अवश्य प्रयत्न करूँगा, परन्तु यश देना तो ईश्वर के ही हाथ है। भोजन के समय तुम आँगन में नारियल और उदबत्ती लेकर बैठना और जब मैं संकेत करूँ तो खड़ी हो जाना।" एक दिन भोजन के उपरान्त जब शामा बाबा के गीले हाथ तौलिये से पोंछ रहे थे, तभी बाबा ने उनके गालपर चिकोटी काट ली। तब शामा क्रोधित होकर कहने लगे कि "देवा! यह क्या आपके लिये उचित है कि आप इस प्रकार मेरे गालपर चिकोटी काटें? मुझे ऐसे शरारती देव की बिलकुल आवश्यकता नहीं, जो इस प्रकार का आचरण करे। हम आप पर आश्रित हैं, तब क्या यही हमारी घनिष्ठता का फल है?" बाबा ने कहा, "अरे! तुम तो ७२ जन्मों से मेरे साथ हो। मैंने अब तक तुम्हारे साथ ऐसा कभी नहीं किया। फिर अब तुम मेरे स्पर्श को क्यों बुरा मानते हो?" शामा बोले कि "मुझे तो ऐसा देव चाहिये, जो हमें सदा प्यार करे और नित्य नया-नया मिष्ठान्न खाने को दे। मैं तुमसे किसी प्रकार के आदर की इच्छा नहीं रखता और न मुझे स्वर्ग आदि ही चाहिये। मेरा तो विश्वास सदैव तुम्हारे चरणों में ही जागृत रहे, यही मेरी अभिलाषा है।" तब बाबा बोले कि "हाँ, सचमुच मैं इसीलिये यहाँ आया हूँ। मैं सदैव तुम्हारा पालन और उदरपोषण करता आया हूँ, इसीलिये मुझे तुमसे अधिक स्नेह है।"

जब बाबा अपनी गादी पर विराजमान हो गये, तभी शामा ने उस स्त्री को संकेत किया। उसने ऊपर आकर बाबा को प्रणाम कर उन्हें नारियल और ऊदबत्ती भेंट की। बाबा ने नारियल हिलाकर देखा तो वह सूखा था और बजता था। बाबा ने शामा से कहा कि "यह तो हिल रहा है। सुनो, यह क्या कहता है?" तभी शामा ने तुरन्त कहा कि "यह बाई प्रार्थना करती हैं कि ठीक इसी प्रकार इनके पेट में भी बच्चा गुड़गुड़ करे, इसलिये आशीर्वादसहित यह नारियल इन्हें लौटा दो।" तब फिर बाबा बोले कि "क्या नारियल से भी सन्तान की उत्पत्ति होती है? लोग कैसे मूर्ख हैं, जो इस प्रकार की बातें गढ़ते हैं।" शामा ने कहा कि "मैं आपके वचनों और आशीष की शक्ति से पूर्ण अवगत हूँ और आपके एक शब्द मात्र से ही इस बाई को बच्चों का ताँता लग जायेगा। आप तो टाल रहे हैं और आशीर्वाद नहीं दे रहे हैं। इस प्रकार कुछ देर तक वार्तालाप चलता रहा। बाबा बार-बार नारियल फोड़ने को कहते थे, परन्तु शामा बार-बार यही हठ पकड़े हुये थे कि इसे उस बाई को दे दें। अन्त में बाबा ने कह दिया कि "इसको पुत्र की प्राप्ति हो जायेगी।" तब शामा ने पूछा कि "कब तक?" बाबा ने उत्तर दिया कि "१२ मास में।" अब नारियल को फोड़कर उसके दो टुकड़े किये गये। एक भाग तो उन दोनों ने खाया और दूसरा भाग उस स्त्री को दिया गया।

तब शामा ने उस बाई से कहा कि "प्रिय बहिन! तुम मेरे वचनों की साक्षी हो। यदि १२ मास के भीतर तुमको सन्तान न हुई तो मैं इस देव के सिर पर ही नारियल फोड़कर इसे मसजिद से निकाल दूँगा और यदि मैं इसमें असफल रहा तो मैं अपने को माधव नहीं कहूँगा। जो कुछ भी मैं कह रहा हूँ, इसकी सार्थकता तुम्हें शीघ्र ही विदित हो जायेगी।"

एक वर्ष में ही उसे पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई और जब वह बालक पाँच मास का था, उसे लेकर वह अपने पतिसहित बाबा के श्री चरणों में उपस्थित हुई। पति-पत्नी दोनों ने उन्हें प्रणाम किया और कृतज्ञ पिता (श्रीमान् औरंगाबादकर) ने पाँच सौ रुपये भेंट किये, जो बाबा के घोड़े श्याम कर्ण के लिये छत बनाने के काम आये।

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु ॥

अध्याय - ३७

चावड़ी का समारोह

इस अध्याय में हम कुछ थोड़ी सी वेदान्तिक विषयों पर प्रारम्भिक दृष्टि से समालोचना कर चावड़ी के भव्य समारोह का वर्णन करेंगे।

प्रारम्भ

धन्य हैं श्रीसाई, जिनका जैसा जीवन था, वैसी ही अवर्णनीय गति और क्रियाओं से पूर्ण नित्य के कार्यक्रम भी। कभी तो वे समस्त सांसारिक कार्यों से अलिप्त रहकर कर्मकाण्डी से प्रतीत होते और कभी ब्रह्मानंद और कभी आत्मज्ञान में निमग्न रहा करते थे। कभी वे अनेक कार्य करते हुए भी उनसे असंबद्ध रहते थे। यद्यपि कभी-कभी वे पूर्ण निष्क्रिय प्रतीत होते, तथापि वे आलसी नहीं थे। प्रशान्त महासागर की नाईं सदैव जागरूक रहकर भी वे गंभीर, प्रशान्त और स्थिर दिखाई देते थे। उनकी प्रकृति का वर्णन तो सामर्थ्य से परे है।

यह तो सर्व विदित है कि वे बालब्रह्मचारी थे। वे सदैव पुरुषों को भ्राता तथा स्त्रियों को माता या बहिन सदृश ही समझा करते थे। उनकी संगति द्वारा हमें जिस अनुपम ज्ञान की उपलब्धि हुई है, उसकी विस्मृति मृत्युपर्यन्त न होने पाये, ऐसी उनके श्रीचरणों में हमारी विनम्र प्रार्थना है। हम समस्त भूतों में ईश्वर का ही दर्शन करें और नामस्मरण की रसानुभूति करते हुए हम उनके मोहविनाशक चरणों की अनन्य भाव से सेवा करते रहें, यही हमारी आकांक्षा है।

हेमाडपंत ने अपने दृष्टिकोण द्वारा आवश्यकतानुसार वेदान्त का विवरण देकर चावड़ी के समारोह का वर्णन निम्न प्रकार किया है:-

चावड़ी का समारोह

बाबा के शयनागार का वर्णन पहले ही हो चुका है। वे एक दिन मसजिद में और

दूसरे दिन चावड़ी में विश्राम किया करते थे और यह कार्यक्रम उनकी महासमाधि पर्यन्त चालू रहा। भक्तों ने चावड़ी में नियमित रूप से उनका पूजन-अर्चन १० दिसम्बर, सन् १९०९ से आरम्भ कर दिया था।

अब उनके चरणाम्बुजों का ध्यान कर, हम चावड़ी के समारोह का वर्णन करेंगे। इतना मनमोहक दृश्य था वह कि देखने वाले ठिठक-ठिठक कर रह जाते थे और अपनी सुध-बुध भूल यही आकांक्षा करते रहते थे कि यह दृश्य कभी हमारी आँखों से ओझल न हो। जब चावड़ी में विश्राम करने की उनकी नियमित रात्रि आती तो उस रात्रि को भक्तों का अपार जन-समुदाय मसजिद के सभा मंडप में एकत्रित होकर घण्टों तक भजन किया करता था। उस मंडप के एक ओर सुसज्जित रथ रखा रहता था और दूसरी ओर तुलसी वृन्दावन था। सारे रसिक जन सभा-मंडप में ताल, चिपलिस, करताल, मृदंग, खंजरी और ढोल आदि नाना प्रकार के वाद्य लेकर भजन करना आरम्भ कर देते थे। इन सभी भजनानंदी भक्तों को चुम्बक की नाईं आकर्षित करनेवाले तो श्री साईबाबा ही थे।

मसजिद के आँगन को देखो तो भक्त-गण बड़ी उमंगों से नाना प्रकार के मंगल-कार्य सम्पन्न करने में संलग्न थे। कोई तोरण बाँधकर दीपक जला रहे थे, तो कोई पालकी और रथ का शृंगार कर निशानादि हाथों में लिये हुए थे। कहीं-कहीं श्री साईबाबा की जयजयकार से आकाशमंडल गुंजित हो रहा था। दीपों के प्रकाश से जगमगाती मसजिद ऐसी प्रतीत हो रही थी, मानो आज मंगलदायिनी दीपावली स्वयं शिरडी में आकर विराजित हो गई हो। मसजिद के बाहर दृष्टिपात किया तो द्वार पर श्री साईबाबा का पूर्ण सुसज्जित घोड़ा श्यामसुंदर खड़ा था। श्री साईबाबा अपनी गादी पर शान्त मुद्रा में विराजित थे कि इसी बीच भक्त-मंडलीसहित तात्या पाटील ने आकर उन्हें तैयार होने की सूचना देते हुए उठने में सहायता की। घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण तात्या पाटील उन्हें 'मामा' कहकर संबोधित किया करते थे। बाबा सदैव की भाँति अपनी वही कफनी पहिन कर बगल में सटका दबाकर चिलम और तम्बाखू संग लेकर कन्धे पर एक कपड़ा डालकर चलने को तैयार हो गये। तभी तात्या पाटील ने उनके शीश पर एक सुनहरा जरी का शेला डाल दिया। इसके पश्चात् स्वयं बाबा ने धूनी को प्रज्वलित रखने के लिये उसमें कुछ लकड़ियाँ डालकर तथा धूनी के समीप के दीपक को बाँयें हाथ से बुझाकर चावड़ी को प्रस्थान कर दिया। अब नाना प्रकार के वाद्य बजने आरम्भ हो गये और उनसे भाँति-भाँति के स्वर निकलने लगे। सामने रंग-बिरंगी आतिशबाजी चलने लगी और

नर-नारी भाँति-भाँति के वाद्य बजाकर उनकी कीर्ति के भजन गाते हुए आगे-आगे चलने लगे। कोई आनंद-विभोर हो नृत्य करने लगा तो कोई अनेक प्रकार के ध्वज और निशान लेकर चलने लगे। जैसे ही बाबा ने मसजिद की सीढ़ी पर अपने चरण रखे, वैसे ही भालदार ने ललकार कर उनके प्रस्थान की सूचना दी। दोनों ओर से लोग चँवर लेकर खड़े हो गये और उन पर पंखा झलने लगे। फिर पथ पर दूर तक बिछे हुए कपड़ों के ऊपर से समारोह आगे बढ़ने लगा। तात्या पाटील उनका बायाँ तथा म्हालसापति दायाँ हाथ पकड़ कर तथा बापूसाहेब जोग उनके पीछे छत्र लेकर चलने लगे। इनके आगे-आगे पूर्ण सुसज्जित अश्व श्यामसुंदर चल रहा था और उनके पीछे भजन मंडली तथा भक्तों का समूह वाद्यों की ध्वनि के संग हरि और साई नाम की ध्वनि, जिससे आकाश गूँज उठता था, उच्चारित करते हुए चल रहा था। अब समारोह चावड़ी के कोने पर पहुँचा और सारा जनसमुदाय अत्यन्त आनंदित तथा प्रफुल्लित दिखलाई पड़ने लगा। जब कोने पर पहुँचकर बाबा चावड़ी के सामने खड़े हो गये, उस समय उनके मुख-मंडल की दिव्यप्रभा बड़ी अनोखी प्रतीत होने लगी और ऐसा प्रतीत होने लगा, मानो अरुणोदय के समय बाल रवि क्षितिज पर उदित हो रहा हो। उत्तराभिमुख होकर वे एक ऐसी मुद्रा में खड़े हो गये, जैसे कोई किसी के आगमन की प्रतीक्षा कर रहा हो। वाद्य पूर्ववत् ही बजते रहे और वे अपना दाहिना हाथ थोड़ी देर ऊपर-नीचे उठाते रहे। वादक बड़े जोरों से वाद्य बजाने लगे और इसी समय काकासाहेब दीक्षित गुलाल और फूल चाँदी की थाली में लेकर सामने आये और बाबा के ऊपर पुष्प तथा गुलाल की वर्षा करने लगे। बाबा के मुखमंडल पर रक्तिम आभा जगमगाने लगी और सब लोग तृप्त-हृदय हो कर उस रस-माधुरी का आस्वादन करने लगे। इस मनमोहक दृश्य और अवसर का वर्णन शब्दों में करने में लेखनी असमर्थ है। भाव-विभोर होकर भक्त म्हालसापति तो मधुर नृत्य करने लगे, परन्तु बाबा की अभंग एकाग्रता देखकर सब भक्तों को महान् आश्चर्य होने लगा। एक हाथ में लालटेन लिये तात्या पाटील बाबा के बाँईं ओर और आभूषण लिये म्हालसापति दाहिनी ओर चले। देखो तो, कैसे सुन्दर समारोह की शोभा तथा भक्ति का दर्शन हो रहा है। इस दृश्य की झाँकी पाने के लिये ही सहस्त्रों नर-नारी, क्या अमीर और क्या फकीर, सभी वहाँ एकत्रित थे। अब बाबा मंद-मंद गति से आगे बढ़ने लगे और उनके दोनों ओर भक्तगण भक्तिभाव सहित, संग-संग चलने लगे और चारों ओर प्रसन्नता का वातावरण दिखाई पड़ने लगा। सम्पूर्ण वायुमंडल भी खुशी से झूम उठा और इस प्रकार समारोह चावड़ी पहुँचा। अब वैसा दृश्य भविष्य में कोई न देख सकेगा। अब तो केवल उसकी याद करके आँखों के सम्मुख उस मनोरम अतीत की कल्पना से ही अपने हृदय की प्यास शान्त करनी पड़ेगी।

चावड़ी की सजावट भी अति उत्तम प्रकार से की गई थी। उत्तम बढ़िया चाँदनी, शीशे और भाँति-भाँति के हाँड़ी-लालटेन (गैस बत्ती) लगे हुए थे। चावड़ी पहुँचने पर तात्या पाटील आगे बढ़े और आसन बिछाकर तकिये के सहारे उन्होंने बाबा को बैठाया। फिर उनको एक बढ़िया अँगरखा पहिनाया और भक्तों ने नाना प्रकार से उनकी पूजा की, उन्हें स्वर्ण-मुकुट धारण कराया, तथा फूलों और जवाहरों की मालाएँ उनके गले में पहिनाईं। फिर ललाट पर कस्तूरी का वैष्णवी तिलक तथा मध्य में बिन्दी लगाकर दीर्घ काल तक उनकी ओर अपलक निहारते रहे। उनके सिर का कपड़ा बदल दिया गया और उसे ऊपर ही उठाये रहे, क्योंकि सभी शंकित थे कि कहीं वे उसे फेंक न दें, परन्तु बाबा तो अन्तर्यामी थे और उन्होंने भक्तों को उनकी इच्छानुसार ही पूजन करने दिया। इन आभूषणों से सुसज्जित होने के उपरान्त तो उनकी शोभा अवर्णनीय थी।

नानासाहेब निमोणकर ने वृत्ताकार एक सुन्दर छत्र लगाया, जिसके केंद्र में एक छड़ी लगी हुई थी। बापूसाहेब जोग ने चाँदी की एक सुन्दर थाली में पादप्रक्षालन किया और अर्घ्य देने के पश्चात् उत्तम विधि से उनका पूजन-अर्चन किया और उनके हाथों में चन्दन लगाकर पान का बीड़ा दिया। उन्हें आसन पर बिठलाया गया। फिर तात्या पाटील तथा अन्य सब भक्त-गण उनके श्री-चरणों पर अपने-अपने शीश झुकाकर प्रणाम करने लगे। जब वे तकिये के सहारे बैठ गये, तब भक्तगण दोनों ओर से चँवर और पंखे झलने लगे। शामा ने चिलम तैयार कर तात्या पाटील को दी। उन्होंने एक फूँक लगाकर चिलम प्रज्वलित की और उसे बाबा को पीने को दिया। उनके चिलम पी लेने के पश्चात् फिर वह भगत म्हालसापति को तथा बाद में सब भक्तों को दी गई। धन्य है वह निर्जीव चिलम। कितना महान् तप है उसका, जिसने कुम्हार द्वारा पहिले चक्र पर घुमाने, धूप में सुखाने, फिर अग्नि में तपाने जैसे अनेक संस्कार पाये। तब कहीं उसे बाबा के कर-स्पर्श तथा चुम्बन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जब यह सब कार्य समाप्त हो गया, तब भक्तगण ने बाबा को फूलमालाओं से लाद दिया और सुगन्धित फूलों के गुलदस्ते उन्हें भेंट किये। बाबा तो वैराग्य के पूर्ण अवतार थे और वे उन हीरे-जवाहरात व फूलों के हारों तथा इस प्रकार की सजधज में कब अभिरुचि लेने वाले थे? परन्तु भक्तों के सच्चे प्रेमवश ही, उनके इच्छानुसार पूजन करने में उन्होंने कोई आपत्ति न की। अन्त में मांगलिक स्वर में वाद्य बजने लगे और बापूसाहेब जोग ने बाबा की यथाविधि आरती की। आरती समाप्त होने पर भक्तों ने बाबा को प्रणाम किया और उनकी आज्ञा लेकर सब एक-एक करके अपने घर लौटने लगे। तब तात्या पाटील ने उन्हें चिलम पिलाकर गुलाब जल, इत्र इत्यादि लगाया और विदा लेते समय एक गुलाब का पुष्प

दिया। तभी बाबा प्रेमपूर्वक कहने लगे कि "तात्या, मेरी देखभाल भली भाँति करना। तुम्हें घर जाना है तो जाओ, परन्तु रात्रि में कभी-कभी आकर मुझे देख भी जाना।" तब स्वीकारात्मक उत्तर देकर तात्या पाटील चावड़ी से अपने घर चले गये। फिर बाबा ने बहुत सी चादरें बिछाकर स्वयं अपना बिस्तर लगाकर विश्राम किया।

अब हम भी विश्राम करें और इस अध्याय को समाप्त करते हुये हम पाठकों से प्रार्थना करते हैं कि **वे प्रतिदिन शयन के पूर्व श्री साईबाबा और चावड़ी के समारोह का ध्यान अवश्य कर लिया करें।**

॥ श्री सद्गुरु साईनाथार्पणमस्तु। शुभं भवतु॥